मयूखदूतम्

[हिन्दी अनुवाद सहित]

रचयिता—
प्रो० रामाशीष पाण्डेय
एम० ए०, बी० एड०, साहित्यव्याकरणवेदाचार्यः
संस्कृतविभागाध्यक्षः
(राँचीस्थ मारवाड़ी महाविद्यालयस्य)

१९७४ ई०

मुद्रक :
हुंकार प्रेस, न्यू मार्केट,
पटना-१

प्रकाशक :
श्याम प्रकाशन
ग्राम—जैतीपुर, पत्रालय – तेल्हाड़ा
जिला—नालन्दा, बिहार

संस्करण :
प्रथम—१०००, १९७४ ई०

मूल्य—२-५० पैसे

शुभकामना

आचार्य देवेन्द्रनाथ शर्मा दूरभाष- { ५०३५२ (कार्यालय) ५०९७३ (आवास)

कुलपति पटना विश्वविद्यालय, पटना--८००००५

श्री रामाशीष पांडेय, एम० ए०, साहित्य व्याकरण वेदाचार्य द्वारा रचित 'मयूख दूत' संस्कृत दूतकाव्य परंपरा की एक उल्लेख्य कड़ी है। मयूखदूत' पर ' मेघदूत' की स्पष्ट छाप है, जो भाव और भाषा दोनों में दिखायी पड़ती है, फिर भी पाण्डेय जी की काव्य-प्रतिभा आवर्जक है और आह्लादक भी। आधुनिकता का समावेश विशेषतः प्रभावी है। कवि की भाषा प्रसाद सम्पन्न है। मेरा विश्वास है कि काव्यरसिकों को 'मयूखदूत' से तृप्ति-तुष्टि प्राप्त होगी ।

८/६।७४ ह० देवेन्द्र नाथ शर्मा

DR. BECHAN JHA
M. A., D. litt., Sahityacharya
University Professor & Head of the
Department of Sanskrit Patna University,
PATNA—5

295, Rajendranagar
PATNA—16
Dated 12-6-74

साहित्याचार्येण श्री रामाशीष पाण्डेय शर्मणा विरचितं मयूखदूताभिधं खण्डकाव्यमवलोक्य नितरां प्रसीदामि । दूतकाव्यपरम्परायां श्री पाण्डेय महोदयस्य प्रयासमिमं दृष्ट्वा विश्वसीमियत् साम्प्रतमपि संस्कृत भाषा साहित्य रसिकान मनोहरिष्यति । 'मयूख-दूत' स्यभाषाशैली च मेघदूतमनुकुरुतः । श्री पाण्डेयस्यायं प्रयासः अभ्यास पथ मारूढ़: अविच्छिन्न श्चेत् महते फलाय कल्पिष्यते । अस्य काव्यस्य प्रसादगुणसमन्विताशैली संस्कृतज्ञान् काव्य रसिकान् विनोदयति एवमेव भविष्येऽपिस्वरचनया संस्कृत साहित्यं भूषयतु इतिआशिषामण्डयन् विरमामि ।

ह० बेचन झा १२।६।७४
पटना विश्वविद्यालय, संस्कृत प्राध्यापकः

राँचीस्थ मारवाड़ी कालेज प्राध्यापकेन श्री रामाशीष पाण्डेयेन रचितम् अभिनवकल्पनाप्रसूतं, प्रसादमाधुर्योत-प्रोतंनवनवशब्द-गुम्फितम् 'मयखदूतम्' चिरादवरुद्धाया : दूतकाव्यपरम्परायाः पुनरुज्जीवनदायकम्प्रतिभाति। लघुकलेवरेऽप्यस्मिन् दूतकाव्ये ऽभिनव भाववाहुल्यं प्रेम्णः मनोवैज्ञानिक विश्लेषणम् विस्तृत भौगोलिकचित्रणम् शैली सौकुमार्यञ्च नितरां मनो मोहकमस्ति। तदर्थं श्री पाण्डेय : सर्वथा धन्यवादार्हः पुरष्कारार्हश्च। काव्य मिदम्-दीयमान कविषु रचनासमुत्साहं पाठकेषुचामिताभिरुचिं जनयेदिति।

ह० दि० प्र० पाण्डेयः
१०-७-७४
अध्यक्षः
स्नातकोत्तर संस्कृत विभागः
राँची विश्वविद्यालय राँची।

श्री : पातु

पं० आद्याचरण झा
बिहार शिक्षा सेवा
सहायक शिक्षा निदेशक (संस्कृत)
बिहार, पटना—१

पटना
दिनांक २--६-७४

पण्डित श्री रामशीष पाण्डेय रचितं 'मयूखदूतं" नाम दूत काव्यं दृष्ट्वा पठित्वाचनितरां मोदमेति मानसम्। प्रस्तुतः "मयूखदूत" माधुनिक युगानुरुप कल्पना प्रसूतं वस्तुतो युगदौत्यं करिष्यति नात्र संदेहलबः।

वाराणसी -प्रयाग-दिल्ली—करांची-यूनान—रोम—पेरिश प्रभृति महानगरीणां स्वाभाविकं वर्णनं सर्वथा मनोग्राही। संस्कृतरचना न केवल प्राच्यविचारधारानुरूपा किन्तु पाश्चात्य गत्यनुरूपाऽपीति प्रमाणयतिकाव्यमिदम्।

वर्धिष्णुरयं युवाकविर्विद्वान् विद्वद्भिरभिनन्दनीयः। एतेषां सफलतायै भगवतीं सीतां प्रार्थये

२-७-७४ ह० आद्याचरण झा

पण्डित श्री रामाशीष पाण्डेय महोदयेन लिखितं मयूखदूत नामकं लघुकायं पुस्तकं स्थाली पुलाक न्यायेन कतिपयश्लोकाँश्चावलोक्यतितरां मे प्रासीददन्त करणम्। आशा से चास्य प्रसाद गुण विशिष्टस्य पुस्तकस्यावलोकनेन अन्येऽपि विद्वांसः छात्राश्च परमामोदं प्राप्स्यन्तीति।

ह० रङ्गनाथ पाठकः

संस्कृत संजीवन विद्यालय, विद्यावाचस्पति, साहित्यवाचस्पति,
चिरैयांटाड़, पटना—१ राष्ट्रपति पुरस्कारेण पुरस्कृतः

दिनांक - १। २। ७४

कवि परिचय

प्रो० रामाशीष पाण्डेय

जन्म तिथि ७ ७-१९४४। पितृ नाम पँ० श्री सिद्धेश्वर पाण्डेय, पितामह नाम-पं० श्री महावीर पाण्डेय, पितृगृह संकेत— ग्राम-छोटिया पत्रालय—टी० करपी, जिला—गया। मातृगृह संकेतः— ग्राम— जैतीपुर, पत्रालय - तेल्हाड़ा —जिला— नालन्दा।

शैक्षणिक विवरण—१९६७ ई० में बी० ए० आनर्स,१९६९ ई० में एम० ए० तथा १९७१ ई० में बी० एड० (पटना विश्वविद्यालय की परीक्षा। १९६७, १९७० ई० एव १९७१ में क्रमशः साहित्य व्याकरण वेदाचार्य की परीक्षा (कामेश्वर सिंह दरभंगा संस्कृत विश्वविद्यालय)

साहित्य साधना—संस्कृत एवं हिन्दी की कविताएँ— अप्रकाशित। मयूखदूत (खण्ड काव्य) १९७४ ई० में प्रकाशित —

अनुसंधानकार्य—Linguistic & critical study of the Nirukta शीर्षक शोध प्रबन्ध -पटना-विश्वविद्यालय की पी० एच० डी० उपाधि के लिए मार्च १९७४ में प्रस्तुत।

अध्यापन कार्य—१ मार्च १९७१ से २१ जनवरी १९७३ तक हथुआ राजज्ञानोदय संस्कृत विद्यालय मन्दिरी, पटना १ में साहित्याध्यापक तथा २२। १।७३ से अद्यावधि अध्यक्ष संस्कृत विभाग मारवाड़ी कालेज, राँची।

प्राक्कथन

रांँची की प्राकृतिक शोभा प्रातःकाल और भी प्रभावी हो जाती है, जो सामान्य लोगों को भी आवर्जित करती है। प्रातः भ्रमण में प्रकृति की छटा से उत्प्रेरित होकर हृदय स्थितभाव का जागरण ही 'मयूखदूत' के रुप में प्राप्त है।

संस्कृत वाङ्मय में दूतकाव्य की एक सुदीर्घ परम्परा रही है। दूतकाव्य का सूत्रपात वैदिक साहित्य से ही होता है। मानव जगत् में दूत का महत्त्व भूला नहीं जा सकता। मानव के व्यापक क्षेत्र में दौत्यकर्म आवश्यक हो जाते हैं। लौकिक संस्कृत में यह काव्य धारा अपनी उत्कर्षता पर पहुँच गयी है। यद्यपि वाल्मीकि एवं व्यास ने ही इस क्षेत्र को प्रकाशित किया, लेकिन इसकी ज्योति को विश्व के समक्ष समुपस्थापित करने का श्रेय कालिदास को है। कालिदास का 'मेघदूत' दूतकाव्य का सर्वोत्कृष्ट नक्षत्र है। 'मयूखदूत' इसी काव्य परम्परा की एक कड़ी है जिसमें शास्त्रीय पद्धति की सुरक्षा के साथ-साथ युगानुरुप आवश्यक परिवर्तन भी हुआ है।

प्रस्तुत दूतकाव्य में दौत्यकर्म करने वाला 'मयूख' से काव्य रसिकों को आश्चर्य नहीं होना चाहिए क्योंकि कालिदासीय परम्परानुसार यह अभिप्रमाणित है—

"कामार्ता हि प्रकृति कृपणाश्चेतना चेतनेषु'

इस काव्य का नायक मानव के शिक्षित वर्ग का प्रतिनिधि है जो प्रेमतत्व में अपनी आस्था रखता है। नायिका पाश्चात्यरमणी है जो राष्ट्रीय भावना एवं प्रेम भावना के समायोजन में तत्पर है। यह भी अपने वर्ग का प्रतिनिधित्व करती है। नायक पुरुषवर्ग का प्रतिनिधि है तो नायिका नारीवर्ग का; इन दोनों की योजना युगानुरुप प्रेम सिद्धांत के सर्वथा अनुकूल है। इस प्रकार की अनेक घटनाएँ देखने को मिलती हैं। प्रेमियों के हृदय में स्थिति के अनुकूल प्रकृत भावना की उद्‌भावना होती है। इस काव्य ग्रन्थ में श्रृंगाररस की

प्रधानता है। शृंगार के दो रुप होते हैं संभोग एवं विप्रलंभ। विप्रलम्भ के बिना संभोगकी पुष्टि नहीं होती (नविना विप्रलम्भेन संभोगः पुष्टिमश्नुते)। शृंगार का वियोगपक्ष दुःखात्मक न होकर सुखात्मक होता है। इस काव्य में शृंगार के दोनों ही रुप उपलब्ध हैं।

पटना से इंगलैण्ड तक के प्रमुख स्थलों का वर्णन भौगोलिक महत्व रखता है। स्थानीय एवं सांस्कृतिक महत्व की भी प्रधानता दी गयी है। इस काब्य में चित्रित स्थल न तो जलयान या वायुयान के मार्ग हैं और न रेल मार्ग। मयूख को इन मार्गों की आवश्यकता भी नहीं होती। इसके लिए नदी, पहाड़, वन आदि विकट मार्ग सरल हैं। भारतीय स्थान अपने सांस्कृतिक-महत्व को सुरक्षित रखते हुए भी पाश्चात्य सभ्यता से अभिभूत हैं। विदेशों के वर्णन पाश्चात्य धारा की नई कड़ी है पूर्वी एवं पश्चिमी सभ्यता एवं संस्कृति को एकत्र करने का उद्देश्य अन्तर्राष्ट्रीय भावना को जगाना तथा विश्वबन्धुत्व की स्थापना करना है। मानबका सम्बन्ध देश, जाति, धर्म आदि की स्वीकृति पर आधारित है। यह मानव की लघुतम इकाई का प्रदर्शक है। मानव सम्बन्ध तभी व्यापक होता है जब व्यक्ति एक सीमा को पार कर दूसरे की सीमा में प्रवेश पाता है।

भारतीय कर्म में आस्था रखते हैं लेकिन समय के चक्र में भारत की दशाबदलती मालूम पड़ती है। सेवक अकर्मण्य हो गये हैं तभी इसके नायक को प्रयास करने के बाद भी पारपत्र की प्राप्ति समयानुसार नहीं होती। यह अकर्मण्यता भारत तक ही सीमित नहीं है। भारतीय परम्परा का शुद्धिकरण कर अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध का विजय स्तम्भ स्थापित करने वाला भारतीय नायक कम आदर्श का पात्र नहीं।

इस काव्य ग्रन्थ के निर्माण में सर्वप्रथम प्रो० दिनेश प्रसाद पाण्डेय, अध्यक्ष, स्नातकोत्तर संस्कृत विभाग, राँची का मैं अतिशय

अभारी हूँ। क्योंकि इनके सम्पर्क में रहने से ही काव्य प्रतिभा का जागरण हुआ। पं० श्री रामचन्द्र मिश्र भू० पू० प्राध्यापक राजकीय संस्कृत कालेज, पटना पं० श्री रंगेश्वर नाथ मिश्र एवं पं० श्री लम्बोदर झा, प्राध्यापक, राजकीय संस्कृत कालेज, राँची का भी आवश्यक सुझाव के लिए मैं कृतज्ञ हूँ। जिन विद्वानों ने इस काव्य-ग्रन्थ के प्रति अपनी सम्मतियाँ भेजी हैं उन लोगों का भी मैं अभारी हूँ। हमारे कतिपय मित्रों ने इस कार्य में उत्साह बढ़ाने का कार्य किया है एतदर्थ मैं उन लोगों के उपकार को भी नहीं भूल सकता। व्यवस्थापक हुंकार प्रेस, भी धन्यवाद के पात्र हैं क्योंकि यथा समय मुद्रण कार्य भी सम्पन्न हुआ। काव्य रसिकों के इस काव्य ग्रन्थ का आस्वादन पर ही मैं अपनी सफलता समझूँगा।

गच्छतस्खलनं क्वापि भवत्येवप्रमादतः
हसन्ति दुर्जनास्तत्र समादधाति सज्जनाः ॥

संस्कृत विभाग,
मारवाड़ी कालेज, राँची।

रामाशीष पाण्डेयः

श्रीः

कश्चिद्विद्याविभवसहितः शोधकार्याभिलाषी
शिक्षाक्षेत्रादधिगतधनोऽसावुवासेङ्गलन्दे[1] ।
तत्रत्यैका सुभगरमणी शुभ्ररूपासुरम्या
प्राप्याशां सा हृदयनिहिते तस्य रागे सुबद्धा ॥

विद्या-वैभव से सम्पन्न किसी गवेषक ने गवेषण कार्य के लिए शिक्षा विभाग से वृत्ति (scholar ship) प्राप्त कर इङ्गलैण्ड में वास किया। वहाँ की एक शुभ्रवर्णा, सुरम्या रमणी उसकी प्राप्ति की आशा में हृदयस्थित राग में सुन्दर ढंग से बंध गयी।

---

(1) *England.*

(२)

प्राप्योपाधिं विहितसमये यापयित्वातिदीर्घं
कालं वर्षत्रयपरिमितं पारपत्रानुकूलम् ।
प्राप्तानन्दो रमणरभसे कामदेव स्वरूपः
आगन्ता ऽसौ जननिनगरीं भारतं विप्रयुक्तः ॥

कामदेव स्वरूप उसने रमण क्रीड़ा में आनन्द प्राप्त करता हुआ पारपत्र के अनुकूल तीन वर्षों का निर्धारित समय बिताकर उससे विप्रयुक्त होकर भारत में मातृभूमि के लिए आने की तैयारी की।

(३

प्रस्थाने तं नयनपयसा सिञ्चतीसाहशीघ्रं
मां त्यक्त्वात्वं व्रजसि नगरीं विस्मरिष्यस्यवश्यम् ।
दृष्ट्वा कांचित् स्मरमदयुतां कामिनीं काञ्चनाभां
पद्माभां तां सुभगनयनां दृष्टिविक्षेपदक्षाम् ॥

प्रस्थान काल में वह नयन सलिल से सींचती हुई शीघ्रता के साथ कहने लगी—'मुझे छोड़कर तुम अपने ग्राम जाते हो, वहाँ की कोई स्वर्णपद्मा-भावाली स्मरमदयुक्ता, दृष्टिविक्षेपदक्षा, शुभगनयना को देख कर अवश्य ही मुझे भूल जाओगे।',

(४)

वर्षं नीत्वा पुनरपिशुभेऽत्रागमिष्यामि नूनं
तावत्कालं कठिन विरहो यापनीयस्त्वयेह ।
देशं धर्मं जनिदपितरौ प्रार्थ्य प्राप्तानुदेश-
स्त्वत्सम्पर्के सुचिरवसतिं कामये चेष्टसिद्धिम् ॥

हे शुभे ! एक वर्ष के बाद मैं पुनः यहाँ आऊँगा । इतने समय के लिए तुझे कठिन बिरह का सामना करना होगा । मैं देश, धर्म, एवं जन्म देने वाले माता पिता को प्रार्थना कर तथा उनसे अनुदेश प्राप्त कर तुम्हारे सम्पर्क में स्थायी वास की इच्छा करता हूँ ।

(५)

छायाचित्रं हृदयनिहितं कर्णयोरस्तिशब्दः
स्वच्छच्छायां तव शशिकलां दीपयन् ध्यानमग्नः ।
नित्यं शृण्वन् श्रवणसुखदान् सादरं प्रेमशब्दान्
द्रक्ष्यामि त्वां हृदि प्रतिदिनं चित्ररूपां चलन्तीम् ॥

तुम्हारा छायाचित्र मेरे हृदय में रहेंगे, तुम्हारे शब्द मेरे कानों में होंगे, ध्यान मग्न मैं तुम्हारी स्वच्छच्छाया शशिकला को प्रकाशित कर श्रवणसुखद प्रेम शब्दों को नित्य सादर सुनता हुआ हृदय में प्रति दिन चित्र रूप में चलती हुई तुझे देखूँगा । (ध्वनियुक्तचल चित्र का सादृश्य)

(६)

आश्वास्यैवं हृदयवसतिं प्रेमयुक्तां नताङ्गीं
विश्रब्धां तां सजलनयनां ज्ञानसत्वेऽपिशून्याम् ।
सम्बन्धानां निखिलजगतो योजनायाग्रयायी
आयातोऽसौ सुभगनगरीं भारते जन्मभूमिम् ॥

हृदय में बसने वाली प्रेमसम्पन्ना' विश्वास पूर्णा अश्रुसिञ्चिता, ज्ञान होने पर भी ज्ञानशून्या नताङ्गी को इस प्रकार समझाकर संसार के सम्बन्धों को जोड़ने में अग्रगामी वह भारत स्थित सुभगनगरी मातृभूमि आ गया ।

(७)

नैवाप्तोऽसावधिकरणिकात् पारपत्रानुदेश —
मादेशस्य ग्रहणविषये चेष्टमानोऽनुबेलम् ।
तत्रत्यायाः प्रणय विरहे प्राप्नुवन् तीव्रतापं
प्रातः प्रातर्नयन सुभगां कान्तिमेकां ददर्श ॥

वह पार पत्र के लिए लगातार प्रयास करता रहा लेकिन अधिकारियों से पारपत्र का अनुदेश नहीं प्राप्त हो सका। प्रियतमा के प्रणय विरह में तीव्रताप को सहता हुआ उसने एक दिन प्रातः प्रातः नयन सुभगा कान्ति को देखा ।

(८)

किं वा रागो हृदय निहितः कामजो वानुतापः
रक्ताभा वा रतिपरिणये सञ्चितस्याम्बरस्य ।
सिन्दूरं स्याद् दिनकरकरेणार्चिताया उषायाः
कामासक्तैर्जगति निखिले दृश्यते राग एव ॥

(कान्ति को देखकर वितर्क करना) क्या यह हृदय निहित राग है या कामदेव का ताप है या रति के परिणय काल में सञ्चित वस्त्र की रक्ताभा है या दिनकर के द्वारा चर्चित उषा का सिन्दूर है । निश्चय ही कामासक्त सम्पूर्ण संसार में राग ही देखता है ।

(९)

किं वा चक्रं क्रमणनिरतं गोपिकावल्लभस्य
वह्नेर्ज्वालं व्रजतिनितरां तापसञ्चार हेतोः ।
कामार्तानां प्रणयरुचयो धर्मिणांशान्तिपुञ्जः
हा वैचित्र्यं ! विरहि हृदयं भ्रामयत्येष रागः ॥

गोपिकावल्लभ के क्रमणनिरत चक्र हैं क्या ? या तापसञ्चार के लिए अविरल बढ़ती हुई वह्नि की ज्वाला है या कामार्त व्यक्तियों की प्रणय कान्ति है या धार्मिकों का शान्ति पुंज है । हा ! यह विचित्र बात है कि प्रेम विरही के हृदय को घुमाता रहता है ।

(१०)

ज्ञात्वा तेजः सपदिरचितैः पुष्पयुक्तोपहारैः
मध्ये मन्त्रैस्तदुभयगतैः प्रेमरागैः सुपुष्टै ।
स्वागत्यर्थं सकल विधयस्तेन सम्पादितास्तु
आशायां हि प्रणय विकलैर्दीयते स्वर्गदानम् ॥

उसने तेज को जानकर शीघ्ररचित पुष्पोपहार से तथा प्रेम एवं राग से सम्पुटित मंत्रों के द्वारा उसके स्वागत की सारी विधियाँ सम्पन्न की क्योंकि प्रणय विकल आशा में स्वर्ग का दान भी दे देता है ।

(११)

मेघाच्छन्ने द्रुतमृदुगतिर्भिन्नरूपेण युक्तः
रक्तं पीतं हरितविमलं कृष्णचित्रं सृजन्वै ।
पार्वत्येन प्रथितसुपथेनागतोऽसौ सुदेवो
मन्ये विभ्रत् सितशरधनुर्व्यक्त रुपस्तमोरिः ॥

(कान्ति का वर्णन) मेघाच्छन्न होने पर द्रुत एवं मृदुगति वाला विभिन्न रूप होता हुआ रक्त पीत, हरित, श्वेत, कृष्ण एवं चित्र वर्ण का सृजन करते हुए पार्वत्यप्रथित मार्ग से सुप्रकाशित मानो श्वेत धनुष एवं बाणों के साथ तमोरि ही प्रकट हुआ है ।

(१२)

पूजां कृत्वा विविधविधिना तोयभारेण चार्घ्यं
प्रीतेर्वाक्यं सपदि रसिकः स्वागतार्थं जगाद।
आदित्यानां जगतिविदिते दिव्यवंशे सुजातः
पूज्यः स्तुत्यः श्रृणुमम वचो लोकविल्लोकवेद्यः ॥

अनेक प्रकार से पूजा कर एवं जलभार से अर्घ्य देकर उस रसिक ने स्वागत में प्रेम पूर्ण वाक्य कहा—संसार में विख्यात सूर्य के दिव्य वंश में जन्म लिए हो। तुम पूज्य, स्तुत्य, लोकविद् एवं लोक वेद्य हो। मेरी प्रार्थना सुनो

(१३)

कामार्तानां हरसि तपनं तापयुक्तोपिरम्यः
आयुर्वेदे गदनिरसने पञ्चकार्येषुमुख्यः।
सन्तप्तं त्वं सुविमल करैः पश्य मां व्याधिपूर्णं
दृष्ट्वा रोगं मनसि विचरँस्तन्निदानेऽवधेहि ॥

तुम कामार्तों के ताप को हरण करने वाले हो, तापयुक्त होने पर भी रम्य हो, आयुर्वेद में गदनिरसन के पञ्चकर्मों में मुख्य हो। अपने विमल करों से मुझ सन्तप्त एवं व्याधिपूर्ण को देखो, रोग देखकर मन में विचरण करो और उसके निदान को जानो।

(१४)

सूर्य्योदेवो जगति विदितः सर्वसामर्थ्य युक्तः ।
शोकार्त्तानां हरति तपनं तापयुक्तः सुवर्णः ।
तत्सम्पर्कात्पुलकितयशाः शुभ्रकान्तिर्मयूखः
सत्सङ्गत्या निखिल भुवने दृश्यते किन्नलभ्यम् ।।

भगवान सूर्यदेव जगत् विख्यात एवं सर्व सामर्थ्य युक्त हैं। वे शोकार्तों के ताप को हरण करते हैं। तापयुक्त एवं सुन्दर वर्णवाले हैं। इन्हीं के सम्पर्क से शुभ्रकांतिमयूख पुलकित यशवाला है। सच है सत्सङ्गति से इस संसार में क्या नहीं प्राप्त होता।

(१५)

लोकज्ञाते वितिमिरकुले त्वां प्रसूतं सुभव्य
मादित्यस्य प्रिय सहचरं सर्वदा दीप्तिमन्तम् ।
जानामित्वत् प्रवलगमनं दूरकान्तोऽहमर्थी
याच्ञामोघा ह्यपि सुखकरी जायते चेत् समर्थे ।।

लोक विदित तुम दिव्य कुल में जन्मलेने वाले हो। आदित्य का प्रिय सहचर एवं सर्वदा प्रकाशमान हो। कान्ता से दूर स्थित मैं प्रार्थी हूं एवं तुम्हारे प्रवलगमन को जानता हूँ। समर्थ व्यक्ति से विफल याचना भी सुखकर होती है।

(१६)

शोकार्तानां त्वमसि शरणं तन्मयूख ! प्रियायाः
संदेशं मे हरकुमुदिनीप्रेमविश्लेषितस्य ।
गन्तव्यं ते प्रथितनगरं स्वीङ्गनन्दं प्रतीच्यां
पारावारादधिगतधनं भोगिनाँ वासभूतम् ॥

तुम शोकार्तो के रक्षक हो ; अत: हे मयूख ! प्रिया के प्रेम से विश्लेषित मेरी प्रिया का सन्देश ले जाओ । तुम्हें विख्यात सुन्दर इङ्गलैंड जाना होगा -जो पश्चिम दिशा में अवस्थित है । वह नगर समुद्र से धन सञ्चित करने वाला एवं भोगियों का वासस्थान है ।

(१७)

गच्छन्काले शृणुममसखे ! पक्षिणः शब्दयुक्ताः
पद्मंशुभ्रं विकचवदनाः धर्मिणो वेदविज्ञाः ।
यात्रारम्भे सुभग शकुनैः सूचयिष्यन्ति भव्यं
कार्यारम्भे प्रबल पुरुषै दृश्यते कार्य सिद्धिः ॥

हे मेरे मित्र ! तुम्हारे यात्रा के समय पक्षियाँ कलरव करती रहेंगी, श्वेत कमल विकसित रहेंगे, नवोढ़ा रमणियाँ रहेंगी वेदज्ञ धर्मिगण रहेंगे, ये सभी तुम्हारे यात्रारम्भ में सिद्ध होने वाले कार्य (भव्य) को सूचित करेंगे । यात्रारम्भ में ही सामार्थ्यशाली पुरुष अपनी कार्यसिद्धि देखलेता है ।

(१८)

आदौ मार्गं शृणुतदनु भो। श्रोष्यसि प्रेमपूर्णं
सन्देशं तं विरहमिलितं मे प्रियार्थं सुकथ्यम्
ग्राम भूमिं व्रततिकुसुमं क्षेत्रसस्यं सुवृक्षम्
पश्यन् शुभ्रैर्मधुरकिरणैः सिद्धये गच्छ शीघ्रम् ॥

सर्व प्रथम तुम जाने का मार्ग सुनो तदनन्तर विरह मिलित प्रेमपूर्ण प्रिया के लिए सुकथ्य सन्देश को सुनोगे। ग्राम, भूमि, लता पुष्प, धान्य एवं सुवृक्षों को मधुर किरणों से देखता हुआ कार्य सिद्धि के लिए शीघ्र प्रस्थान करो।

(१९)

दिव्या चित्रा तत्रपथिगता भव्यहर्म्यावलीभृद्
विख्याता सा विदितनगरी प्रान्तमध्यस्थिता या।
गङ्गास्रोतः पवनमिलिता शैत्यपुण्यान्विताभा
नूनं दृश्या सचिववसती राजधानी विहारे ॥

मार्गस्थित दिव्य, चित्र एवं भव्य अट्टालिकाओं से युक्त प्रान्तमध्य विशिष्ट ख्यातियुक्त सचिवालयों वाली नगरी, जो कि गङ्गानदी के स्रोत मिलित वायु से प्रथित शैत्य एवं पुण्यभा से अन्वित है, ऐसी विहार की राजधानी को तुम अवश्य देखना।

(२०)

फुल्लैः पुष्पैश्च कुसुमपुरीं पुष्पनाम्नींच रम्याम्
पुत्रात्पूर्वं ह्यधिगतनिजां पाटलिं पाटलाभाम्।
प्रान्ते तस्याः प्रथितपटनां भारतस्याङ्गभूना
मापूर्वान्ताद् विमलभवनां पश्य तां पश्चिमान्ताम्॥

भारत का अङ्गभूत प्रान्तस्थित पटना को देखना जो विमल भवनों से युक्त तथा पूरब से पश्चिम तक फैली है। फुल्लपुष्पों के कारण इसका नाम कुसुमपुरी तथा रम्यपुष्पपुरी हुआ। पुत्र के पूर्व पाटलाभा को धारण करने के कारण यह पाटलिपुत्र नामवाली है। यही कालान्तर में पटना के नाम से विख्यात हुई।

(२१)

प्रेम्णश्चित्रम् प्रचरति सखे! चात्रकंदर्पकेतो
र्दृष्टे स्वप्ने हृदयनिहिताराधनायाः कुमार्याः।
आख्यान तज्जनरुचिकरं कामलोकस्य पुण्यं
गद्ये रम्ये प्रथितमधुना दृश्यते वै सुबन्धोः॥

हे मित्र! जिस पाटलिपुत्र में कन्दर्पकेतु एवं स्वप्न दर्शनानन्तर हृदय निहित कुमारी वासबदत्ता का प्रेमचित्र प्रचरित होता है। यह आख्यान लोकरुचिकर एवं कामलोक का पुण्य है। सुबन्धु के गद्यवृत्त (वासबदत्ता गद्य काव्य) में रचित आज भी यह देखा जाता है।

(२२)

गङ्गायास्त्वं सुभगसलिले प्रोच्छलत्स्वच्छविम्बे
तीरोपांतात् प्रकटितरुचिं द्रक्ष्यसि स्निग्धदृष्टि :।
तत्रस्नाने शिथिल बसनञ्चोर्ध्वं सूक्ष्माम्बराणां
दृष्ट्वा कांतिं फलमविकलं लप्स्यसे कामिनीनाम् ।।

तुम गङ्गा के उछलते हुए स्वच्छ विम्बेवाले विमल जल में प्रकटितछवि एवं स्निग्ध दृष्टि युक्ताओं को देखोगे तथा स्नान काल में शिथिल वसना ऊर्ध्वसूक्ष्मव त्रा कामिनियों को किनारे से ही देखकर अविकल फल की प्राप्ति करोगे ।

२३)

तत्रस्थास्ता नगरवनितास्तोयलीलासु सक्ता
बारिक्षेपैर्ग्रहणनिरता मुक्तनीवी नितम्बाः ।
नद्यास्तीरे कमलवसनाः हेमहारान्विता याः
दृष्ट्वालभ्यं फलमतितरां नेत्र निर्वाण रूपम् ।।

वहाँ की जलक्रीड़ा सक्त नगरवनिताएँ जल के छींटेमारने एवं ग्रहण करने में निरत, नीवी से मुक्त नितम्ब प्रदेशवाली, कमल वसना हेमहारयुक्ताओं को नदी के किनारे में देखकर नेत्रसुखोपभोगरूपी अतिशय फल को प्राप्त करोगे ।

(२४)

तत्रस्थं तं नयनसुभगं पूज्यमादित्यदेवं
साक्षाद्दृश्यं प्रथितकिरणैः शक्तिमुत्पादयन्तम् ।
नत्वामूर्ध्ना विकचकुसुमैः सोपचारैः फलैर्वा
पूजां कृत्वा सफलमरुजं प्राप्यते यत्र लोकैः ॥

वहाँ के लोग वहाँ स्थित नयन सुभग आदित्यदेव, जो साक्षाद्दृश्य हैं वे अनेक प्रथित किरणों से शक्ति को उत्पन्न करते हैं, को प्रणाम कर विकसित पुष्पों, फलों एवं विभिन्न उपचारों से पूजा करके आरोग्य रूपी फल की प्राप्ति करते हैं।

(२५)

आदित्यानां सबलकिरणैर्यत्ररक्ताभयुक्तै
रुदबुद्धास्ते भ्रमरनिकराः पद्मपत्रेषु बद्धाः ।
सर्वे नद्धाः कुशल करणैः कर्म सम्पादयन्तः
संसुप्तान् वै कथयति रविर्जाग्रतोत्तिष्ठताशु ॥

जहाँ पर सूर्य के रक्ताभ सबल किरणों से पद्मपत्रमें बँधे भ्रमर समुदाय उठ जाते हैं तथा वे सब अपने अपने कुशल इंद्रियों से कर्म सम्पादन में लग जाते हैं। निश्चय ही सूर्य सोये हुए को कहता है—'जगो और शीघ्र ही उठो।

(२६)

यत्रस्थानं सुभगप्रथितं नामगांधीतिरम्यं
स्वच्छं शुभ्रं हरितहरितं शाद्वलस्याङ्कुरेण।
नित्यं चेतो हरति पवनो दक्षिणेनागतो य
आबालानां भ्रमण निरत स्वास्थ्य कामार्थिनीनाम् ॥

जहाँ पर सुंदर विख्यात गाँधी मैदान है, जो स्वच्छ, प्रकाशित एवं हरित शाद्वलों के अङ्कुरों से रमणीय है। जहाँ पर दक्षिण दिशा से आयी हुई हवा आबाल भ्रमण निरत स्वास्थ्य कामार्थिनियों के चित्त को हरण करती है।

(२७)

प्रातः काले निजकरचयैः किञ्चिदास्वाद्य नूनं
भ्रूविक्षेपे ननुचरभसे कामशास्त्रे जितानाम्।
वस्त्रं यासां शिथिल प्रथिलं सालसानां मुखाब्जं
ह्यन्ते रात्रौ मृदित कुसुमं पश्चिमाशां व्रजत्वम् ॥

शिथिल एवं प्रथिल वसना, भ्रूविक्षेप, रभस एवं कामशास्त्र में जितने वाली आलस्य युक्ताओं के मुखकमल, जो निशावसान में मृदित है, को प्रातः-काल में अपने कर समूहों से कुछ आस्वादनकर पश्चिम की ओर आगे बढ़ना।

(२८)

गत्वाकाशीं त्रिनयनबपुर्देवदेवस्यचित्र
ज्यर्तिलिङ्ग जगतिविदितं देवनधाउपान्ते ।
स्नात्वानत्वा कलिमलहरं शङ्क शान्तमूर्त्ति
सम्पूज्य त्वं फलमतिशुभं प्राप्य संपश्यशोभाम् ॥

गंगा के किनारे शंकर का प्रसिद्ध गृह काशी जाकर स्नान कर कलिमल-हरण कर्त्ता शान्त मूर्ति शङ्कर के ज्योतिलिङ्ग को पूजा एवं प्रणाम कर अति शुभ फल को प्राप्त कर शोभा को देखो ।

(२९)

तत्रस्थित्वा भवनशिखरे कृत्रिमावेश शीलाः
शृङ्गाराणां विविधविधिभिः प्रक्षिपन्तीः कटाक्षान् ।
हावैर्भावैश्चपलकरणैः शब्दितैर्नूपुरैस्ताः
द्रक्ष्यस्यान्तः करणहरण ध्यामग्नाः सुरुपा ॥

वहाँ अट्टलिकाओं के शिखर पर बैठकर कृत्रिमवेशयुक्त, बहुविधशृङ्गार विभूषित, कटाक्ष प्रक्षेप सलग्न एवं हाव, भाव, चपल इन्द्रियों तथा नूपुर के शब्दों से अंतः करण को हरण करने में ध्यान मग्न सुरुपाओं को देखोगे ।

(३०)

द्रष्टव्यस्ते जगति विदितो विश्वविद्यालयो यो
हिन्दूपूर्वो विलसति सदा विश्वमैत्रीप्रदायी।
उच्चैः श्रृङ्गैस्त्रिभुवनगुरोर्वेश्मना सूच्यते यः
ज्ञानाधीशैर्विततभवने ज्ञानदानं करोति ॥

वहाँ का हिंदू विश्वविद्यालय, जो संसार प्रसिद्ध है एवं विश्वमैत्री प्रदान करता है तथा शिवमंदिर के उच्चश्रृङ्गों से जो सूचित होता है, अपने विस्तृत एवं विख्यात भवनों में ज्ञानाधीशों (योग्य प्राध्यापकों) के द्वारा ज्ञानदान करता है, इसे तुम अवश्य देखना।

(३१)

शोभां तस्या विविध रचनां सम्यगालोक्य गच्छेः
शीघ्रं पुण्यं त्रिनदमिलितं संगमं तं प्रयागम्।
लोकाः स्नात्वा मनसिकृतकं कामयन्ते सुखार्थम्
तीक्ष्णैस्तापैः कृतबहुतपा भुंक्ष्व सम्यक् फलौघम् ॥

विविध रचना से युक्त कांशी की शोभा को देखकर प्रयाग के लिए प्रस्थान करो जहाँ तीन पुण्य नदियों का संगम है। लोग सुखापलब्धि के लिए स्नानकर मनस्थित वस्तु की कामना करते हैं। तुम भी तीक्ष्ण तापों से तपस्या कर वृहत् फलभण्डार का उपभोग करना।

(३२)

गङ्गायास्तां सुभगसलिले भानुजायास्तरुण्या :
कृष्णां मन्द्रां हरिविरहजामश्रुधारां मिलन्तीम् ।
मध्यस्था या धवलवसना मानयन्तीव भाति
तिस्त्रो वेण्यो निजनिज रुचा शब्दशक्तिं गिरन्ति ॥

स्वच्छ गंगाजल में मिलती हुई यमुना की उस कृष्ण विरहजन्य अश्रु-धारा को धवल वसना (स्वच्छजल वाली) सरस्वती मनाती हुई की भाँति लगती है। तीनों वेणियाँ अपनी अपनी कांति से शब्द शक्ति को ध्वनित करती है।

(३३)

तिस्त्रो नद्यो धृतभुवनभू पुण्यसारा : सुहस्ता :
शोभन्ते ताः जगति विदिते कुम्भयुक्ते प्रयागे।
पुण्यं कुम्भं कलयितुमिमे धर्मवीरा : सुकार्या :
संगच्छन्तेत्रिदशभवनं प्राप्तपुण्याः सुलोकम् ॥

पृथ्वी के पुण्यसार को सुन्दर हाथों में धारण करनेवाली तीनों नदियाँ जगत् विख्यात कुम्भक्षेत्र प्रयाग में सुशोभित हैं। धर्मवीर कार्यदक्ष पुण्य कुम्भ को चाहने वाले पुण्य को प्राप्तकर सुलोक स्वर्ग को जाते है।

(३४)

प्रासादं तं सविधरचितं नेहरोरिन्दिरायाः
जन्मस्थानं जननिसदनं द्रक्ष्यसि त्वं ह्यवश्यम् ।
तत्रोद्याने विकचकुसुमालंकृतानां तरूणां
शोभा नूनं नयनपथगा ते भविष्यत्यतुल्या ॥

नेहरू एवं इन्दिरा के सविध रचित प्रासाद; मातृभूमि तथा मातृगृह को तुम अवश्य देखोगे। जहाँ के उद्यान में विकसित पुष्पों से अलंकृत वृक्षों की तुम्हारी किरणरञ्जित शोभा निश्चय ही अतुल्य होगी।

(३५)

बाला प्रौढा युवतिवनिताश्चित्रवासोभिरिद्धाः
प्रातःकाले भ्रमणनिरताः कृत्रिमाऽऽमुक्तकेशाः ।
गान्धर्वेण प्रथितविधिनोद्वाहितास्तानताङ्‌ग्यो—
नो पीड्या भोः प्रणयनिरताः दक्षलोकेषु सक्ताः ॥

हे मयूख ! बाला प्रौढ़ा, युवति एवं वनिताएँ रंगीन वस्त्रों से युक्त कृत्रिम एवं मुक्त कुन्तलों वाली प्रातः काल भ्रमण निरत प्रख्यात गांधर्व विधि से परिणीत दक्षलोगों में आसक्त एवं प्रणय निरत होगी उन नताङ्गियों को पीड़ा मत पहुँचाना।

(३६)

यद्यप्यस्ति प्रियसुखकरा दर्शनीयाश्च दृश्या—
स्त्यक्तव्यास्ते त्वरितगतिना कार्यसम्पादनाय।
अग्रे गत्वा धवलसदनं ताजयुक्तं महान्तं
प्रेम्णो रूपं चिरसुचरितं पश्यतद्दीप्तिपूर्णम्॥

यद्यपि वहाँ अन्य दृश्य भी प्रिय सुखकर एवं दर्शनीय है लेकिन द्रुतगति से कार्य सम्पादन के लिए इन सबों को छोड़ देना तथा आगे जाकर दीप्तिपूर्ण धवल ताजमहल को देखना जो चिर चर्चित एवं प्रेम का रूप है।

(३७)

द्रष्टुं शोभां प्रकृतिरचितां भारतस्येतिनून—
मायातं तत्त्रिदश सदनात् भानुजाया उपान्ते।
मन्ये भूमौ मदनकुसुमाच्छन्न विम्बाधराणां
देवस्त्रीणां भ्रमणसदनं निर्मितं वासवेन॥

निश्चय ही भारत के प्रकृति की शोभा को देखने के लिए यमुना के किनारे देवलोक से वह (महल) आया है। लगता है कामसक्त विम्बाधर देवाङ्गनाओं के पृथिवी पर भ्रमण के लिए भ्रमण गृह का निर्माण देवराज ने कर दिया है।

(३८)

शृङ्गे यत्र प्रकटित महो! चन्द्रवच्चाकचिक्यं
तत्रैवत्वं विरहमिलितं तापतीव्रं प्रपश्ये: ।
प्रेमासक्तो रसिकनृपति: कान्तया विप्रयुक्त:
सत्यं प्रेम्णो विरहभवनं स्थापयामास चित्रम् ॥

अहा ! जिसके शिखर में चन्द्रमा तुल्य चाकचिक्य प्रकटित है, वहीं पर तुम विरह से सम्पृक्त तीव्रताप को देखो। प्रेमासक्त रसिक राजा ने निजप्रियतमा से वियुक्त होकर वास्तव में विचित्र प्रेम विरह का भवन ही स्थापित कर दिया है।

(३९)

तत्रोद्याने युवयुवतयो युग्मसंख्यां विधाय
गृह्णन्त्योंसं मृदुलहरिते शाद्वले सञ्चरन्ति।
नूनं तासां मदनसदनानां सुपक्ष्माञ्चितानां
प्रेम्णश्चित्तं चपलचपलं सावधानं प्रपश्ये: ॥

वहाँ के उद्यान में युवक एवं युवतियाँ युग्म संख्या में मृदुलशाद्वलपर कंधे पकड़ कर संचरण करते हैं। निश्चय ही उन मदन सदना सुभ्रु ललनाओं के प्रेम के निरतिशय चपल चित्त को सावधानी से देखना।

(४०)

अग्रे किञ्चिद् व्रजप्रियसुहृत् भारतद्वारवत्याः
देहल्यास्तान् गिरवर निभान् तुङ्गसुशृङ्गसौधान् ।
पश्यन् यत्र प्रकटितरुचोन् चन्द्रलीलासु सक्ता—
नामोदन्ते भ्रमणनिरता आगता विप्रदेशात् ॥

हे प्रिय सुहृत् ! यहाँ से कुछ आगे जाओ जहाँ पर बाहर से आये भ्रमणार्थी भारत का द्वार भूत दिल्ली के पर्वत शृङ्ग सम उच्च चन्द्रक्रीडासक्त एवं प्रकाश युक्त अट्टालिकाओं को देखते हुए प्रसन्न हो जाते हैं ।

(४१)

पाण्डोः पुत्रा अनुपमबलाः कौरवैर्यत्रयुद्धं
प्राप्तुं राज्यं व्यदधुरतुलं द्युतमार्गेण नीतम् ।
तस्मिन्नासन् निखिल जगतो दत्तचित्तामनुष्याः
सर्वेऽप्यन्ते कृतहयमखाः स्वर्गलोकं प्रविष्टा ।

जहाँ पर पाण्डवों ने द्यूत मार्ग से गृहीत अतुल राज्य को प्राप्त करने के लिए कौरवों के साथ युद्ध किया । उस युद्ध में सम्पूर्ण संसार के मनुष्य दत्तचित्त थे । अन्त में सभी पाण्डुपुत्रों ने अश्वमेधयज्ञ कर स्वर्ग को प्राप्त किया ।

(४२)

रम्यं चित्रं नयनसुखदं भव्य दिव्याङ्गनानां
दृष्ट्वाक्लान्तिस्तवपथिगता नाशमीयादवश्यम् ।
स्वर्णाभानां वदनकमलं प्रस्फुटत्ततस्वकाले
शब्दस्पर्शौ रसपरिमलौ युक्तरूपं गृहाण ॥

भव्यदिव्याङ्गनाओं के नयन सुखद रम्यचित्र को देखकर मार्ग जन्य तुम्हारी क्लान्ति अवश्य समाप्त हो जायेगी। स्वर्णा भाओं के कमल वदन को अपने समय में प्रस्फुटित होने पर शब्द, स्पर्श, रूप, रस एवं गन्ध को ग्रहण करो।

(४३)

दुर्गः सौम्योऽरुणपदयुतो हेमश्रृङ्गोतिरम्यः
शोभायुक्तो धृतवहुरुचिर्मौद्गलोद्यानमध्ये ।
स्वीयैः शुभ्रर्वहुलभवनैर्दर्शयन् स्वं विलासं
यूनां दृष्टीः पठनधवला कर्षयत्याशु यत्र ॥

जिस दिल्ली के सौम्य रक्तदुर्ग, (लालकिला) जिसके शिखर हैमवर्ण के रमणीय हैं मुगल उद्यान में अवस्थित, शोभासम्पन्न एवं अनेक तरह के प्रकाश को धारण करने वाला है। अपने शुभ्र वहुल भवनों से विलास का प्रदर्शन करते हुए युवकों की अज्ञान रहित दृष्टि को भी आकर्षित कर लेता है।

(४४)

आयाता वै धरणिसुरजा सेन्दिरा लोकमाता
शास्तुं देशं नयसुचरितैः धर्मसंस्थापनेन ।
उद्दण्डानां दलननिरता जीवलोकस्य हेतोः
धर्मे हानावधिक विदितो भारतीयावतारः ॥

निश्चय ही धर्म की स्थापना एवं न्याय प्रचार से देश पर शासन करने के लिए वह धरणीसुरजा लोकमाता इन्दिरा आयी है जो जीवलोक के कल्याण के लिए उद्दण्डों को दलन करने में निरत है । धर्म की हानी होने पर भारतीयावतार विदित ही है ।

(४५)

रम्यं भव्यं सुखदरचितं राष्ट्रपस्यातिशालं
प्रासादं त्वं निभृतरमणं द्रक्ष्यसि भ्राजमानम् ।
शीतोष्णायाः नियमनपरं स्वर्गतुल्यं सुखार्थं
तद्द्वारस्थान् प्रवलपुरुषान् लङ्घयन् गच्छ शीघ्रम् ॥

राष्ट्रपति के अति विशाल रम्य, भव्य, सुखदरचित प्रकाशयुक्त एवं निभृतरमणीय प्रासाद को तुम देखोगे जो वातानुकुलित है, तथा स्वर्गतुल्य सुख के लिए है, उसके द्वार स्थित प्रबल पुरुषों (पहरेदारों) को लाँघ कर शीघ्र ही प्रवेश कर जाना ।

(४६)

आरूढं त्वां गगनशिखरं घोटकैः सप्तसंख्यै-
श्चित्रैर्यानैस्त्वरितगमनं हेमवर्णाभचक्रैः ।
धर्मप्राणा मदनवशगाः कार्यसम्पादकास्ते
प्रेक्षिष्यन्ते सजलकुसुमैः रागयुक्तक्रियाभिः ॥

धर्मप्राण, मदनवशवर्ती एवं कार्य सम्पादकगण जल एवं पुष्पों के साथ रागयुक्त क्रियाओं से स्वर्णवर्णाभ चक्रवाले सातघोड़ों से युक्त चित्रित यान से द्रुतगत्या गमन करते गगन शिखरपर आरूढ़ तुमको देखेंगे ।

(४७)

सर्वाशक्त्यो निखिलनिधयो भारते भान्तिपूर्णाः
तास्त्वं दृष्ट्वा व्रजप्रिय सुहृत् ! पश्चिमान्तेनशीघ्रम् ।
पाकिस्तानं तदपिरमणं प्राग्भवं भारतांग—
मार्य्यैर्यत्र प्रथितविभवैः पूजिता भारतश्रीः ॥

हे प्रिय सुहृत् ! भारत में सभी शक्तियाँ एवं सभी निधियाँ पूर्णरूप में सुशोभित है उसे देखकर तुम पश्चिम के रास्ते से शीघ्र पाकिस्तान चला जाना जो पूर्वभूत भारत का अंग है तथा रमणीय है । जहाँ पर आर्यों ने प्रख्यातविभव के साथ भारतश्री की पूजा की थी ।

(४८)

पाकिस्तानं व्रज प्रियसखे ! तां कराँचीं जलौघां
व्यापारस्य प्रकृतिरचितां वन्दरागाहरम्याम्।
यानं यत्रप्रतिपलमलं निर्गतंचागतंच
रम्यैर्दृश्यैः सरसहृदयं मंजुभावैर्विभर्ति ॥

हे प्रिय मित्र ! पाकिस्तान में तुम कराँची चले जाओ जो प्रकृति रचित व्यापार के लिए सुरम्य बन्दरगाह है, जहाँ पर यान प्रतिक्षण बहुत अधिक संख्या में आते एवं जाते रहते हैं तथा रम्य दृश्य एवं मंजुलभावों से वह सरस हृदय को धारण करता है।

(४९)

स्थानादस्मात् त्रिदशप्रथमं देवपूज्यं मकेशम्
गच्छन्काले निजशुभकरैः पूजयत्वं शुभेशम्।
सम्यक् पूजाविहित विधिभिर्यत्रशून्याः मनुष्याः
धर्मात्कीर्तिर्भवति भुवने दीयतां धर्मदीक्षा ॥

इस स्थान से जाते समय तुम त्रिदशों में प्रथम, पूज्य देव मकेश्वर नाथ को अपनी शुभ्रकिरणों से पूजा करो, जो शुभ के मालिक हैं, जहाँ के मनुष्य विहित पूजा की सम्यक् विधि से शून्य हैं उन्हें तुम धर्मदीक्षा दो कि संसार में धर्म से कीर्ति होती है।

(५०)

अग्रे तस्मिन्नगमजलधौ तेजसापूरितांगं
जीवानां संग्रहणनिरतं रत्नमन्वेष्टुकामम् ।
उच्चैर्वंशं परमरमणं रश्मिनद्धं प्रपन्नम्
त्वां दृष्ट्वा तज्जलचरगणाः प्रोच्छलिष्यन्त्यवश्यम् ।।

उस अगम समुद्र में ऊँचे बंशवाले सुन्दर किरणों से युक्त तेज से पूर्ण अंगवाला जीवों के संग्रह करने में निरत रत्नान्वेषक तुझे देखकर जलचरगण अवश्य ही उछलेंगे। (ऊँचे बाँस में रस्सी से बँधा हुआ तेज अंगवाला वंशी, जो मछली ग्रहण में निरत होता है, को देखकर मछलियाँ उछल जाती है।)

(५१)

उच्चस्थानात् गमननिरतश्चंचलः स्वप्रवृत्या
दिव्याल्लोकात् सपदिजगतो हारयिष्यन् सुवार्ताम् ।
आरूढस्त्वं गगनममलं गच्छकार्याभिलाषो
नीचैः कार्यं धृतमविकलं वीक्ष्यते किं तथोच्चैः ।।

गमन निरत चञ्चल प्रवृत्तिवाला तुम दिव्यलोक उच्च स्थान से शीघ्र ही संसार के व्यवहार को जानता हुआ कार्याभिलाषी स्वच्छगगन में आरूढ़ क्योंकि अधम पुरुषों के द्वारा अपनाया गया कार्य भी अविकल देखा जाता है। तुम्हारे ऐसा उत्तम की तो बात ही क्या।

(५२)

तस्मिन्मार्गें त्वरितगमनेनाम्बुयानाग्रगामी
आगच्छत्तत्परिमितधनं वाहनं वारिमध्ये।
पश्यन्नग्रे व्रजलघुगतिस्त्वं न लंध्यः कदापि
सूर्य्यालोके प्रमुदितगतिः मन्दतां याति दीपः॥

उसमार्ग में शीघ्र गमन करने से जलयान के आगे जाने वाला तुम समुद्र के बीच आते परिमित धनवाले वाहन को देखते हुए धीरे से आगे जाना। तुम कभी किसी से लाँघे नहीं जा रुकते क्यों कि सूर्य के आलोक में प्रमुदित गति दीपक भी मन्द हो जाता है।

(५३)

तस्मिन्मार्गेक्रममनुसरन् प्राप्स्यते तद्युनानं
यत्रानेके नृपतिप्रवराः राज्यसंचालनाय।
कृत्वायत्नं सवलकरणैः प्राप्तवन्तः प्रमोदान्
लोकख्याताः सुविदितवलाः कीर्तिमन्तः सुधर्मैः॥

उस मार्ग से जाते हुए तुझे यूनान मिलेगा, जहाँ के लोकविख्यात, विदित वलवाले धर्म से कीर्त्ति सम्पन्न, प्रवल राजाओं ने राज्य सञ्चालन के लिए मनोयोग से यत्न कर प्रमोद प्राप्त किया।

(५४)

मध्येक्षामप्रथिलजघनश्वेतवर्णान्वितानां
नाना भावैरसपरिमलैः पूर्णकुम्भस्तीनाम् ।
तत्रस्थानां प्रकृतिसुषमा कामिनीनामनन्या
स्निग्धैर्नेत्रैर्नयनसुभगा दर्शनीया मयूख ! ॥

हे मयूख ! तुम वहाँ के मध्यक्षीणा, पृथुलजघना, श्वेतवर्णा, नाना भाव एवं रसपरिमलयुक्त पूर्ण कुम्भस्तनी कामिनियों की अनन्य सुभग प्रकृत सुषमा अपने स्निग्धनेत्रों से देखना ।

(५५)

उच्चैः शृंगंमरकतरुचा दीप्तिमत्तन्नितान्तम्
प्रासादानां गिरिवरनिभं दीप्स्यते त्वत्प्रभावात् ।
यत्रस्थास्ताः हरितसरलाः दर्पणं दर्शयन्तीः
अग्रे सतुम् प्रवलमदनाः सूचयिष्यन्ति मार्गम् ॥

अट्टालिकाओं के हिमालय सदृश ऊँचे शृङ्ग, जो कि मरकत कान्ति से कान्तिमान है, तुम्हारे प्रभाव से और भी प्रकाशित हो जायेंगे । जिसपर बैठी प्रबल मदना, प्रसन्न वदना, सरला एवं दर्पण दिखाती हुई कामिनियाँ आगे जाने के लिए तुम्हारे मार्ग को सूचित कर देगी ।

(५६)

नद्यास्तीरात् विमलससिले मुक्तनीवीनितम्बाः
शैत्याधिक्यात्कलितपुलकाः कामिनीश्चान्यसक्ताः ।
तप्तैर्हंस्तैर्गणनरहितैः स्पर्शमासादयन्तीः
तन्वीः पश्य प्रियतमनिभासंगसम्प्राप्त कामाः ॥

नदी के किनारे से स्वच्छ जल में मुक्त नीवी नीतम्वा, शैत्याधिक्य **से पुलकित** वदना, अन्य सक्ता कामिनी असंख्य तप्त किरणों से स्पर्शप्राप्त **करती** हुई प्रियतम सदृश सङ्गप्राप्ताभिलाषिणी एवं तन्वी रमणियों को **देखना ।**

(५७)

प्राप्तं काले गिरिवरदिशा वारुणीं स्वर्णवर्णी
भाषातस्या धवलसुवपू रागरंगेणयुक्तः ।
सारक्ता वा त्वमसितरलालक्तकालिप्तकान्तिः
तद्वेत्स्यन्ति प्रमुदितहृदो योगिनो भोगिनो वा ॥

पार्वत्यमार्ग से स्वर्णवर्णा वारुणी दिशा (पश्चिम) को प्राप्त करने पर **उसकी** कान्ति से धवलसुवपु तुम रागरंग से युक्त हो जाओगे। तब वह **रक्ता है या** तुम तरल लाक्षारस में लिप्त कान्तिवाला हो इसे प्रमुदित हृदय **वाले** योगी या भोगी ही जानेंगे ।

(५८)

यामिन्यन्ते सुरकुलगुरोराहृतायां प्रियायां
कामासक्तं जनिततनुजं हृयूषयालिंगितांगम् ।
मज्जन्तं तं विकलहृदयं पश्यसिन्धावगाधे
पश्चात्तापं भजति पुरुषो दूषितस्वस्वभावः ॥

देव गुरुपत्नी को अपहरण कर कामासक्त, पुत्र उत्पन्न करनेवाला, उषा के द्वारा आलिङ्गित एवं व्यथित हृदय चन्द्रमा को अगाध सिन्धु में डुबते हुए तुम देखना क्योंकि अपने स्वभाव से दूषित पुरुष पश्चात्ताप प्राप्त करता है ।

(५९)

धर्मस्थानं त्रजसुविदितं 'रोम' इत्याख्य देशं
पोपः पापं हरति वसति त्राणहेतोर्जनानाम् ।
नाना भावैर्हृदय निहितैश्चागताः यत्र सत्यं
शान्तिं सौख्यं धनजनकृपां सर्वथा प्राप्नुवन्ति ॥

इसके बाद सुविदित 'रोम' जाओ जहाँ लोककल्याण के लिए पोप वास करता है तथा वह पाप को हरण करता है, जहाँ आने वाले जीव निश्चय ही हृदय निहित भावों से शान्ति, सौख्य, धन, जन एवं कृपा को पूर्ण रूप में प्राप्त करते हैं ।

(६०)

चित्रंयत्र प्रतिगृहमहो ! भाति शूलाग्रलग्नं
सायंकाले भवति बहुशो मेलनं नागराणाम् ।
आँग्लालापैर्मधुरमधुरैर्गीतवादित्र रम्यै—
र्नूतनं भावं कलयती मनः पूर्वभावं व्युदस्य ॥

अहो ! जिस रोम देश के प्रत्येक गृह पर शूलाग्र संलग्न चित्र है सायंकाल प्रायः नागराओं का सम्मिलन हुआ करता है (प्रार्थना के लिए एकत्रित होना) मधुर मधुरगीतवादित्रों से एवं आँग्ल आलापों से मन अपने पूर्व भाव को छोड़कर नवीन भाव ग्रहण करता है ।

(६१)

नार्यः स्वैरं धृतयुवकरं वाटिकायां भ्रमन्त्यः
सूक्ष्मैर्वस्त्रैश्चलित चलितै र्व्यञ्जयन्त्यः कुचाग्रम् ।
रम्भ स्तम्भप्रथित जघनादीर्घनेत्राः सकामाः
मित्र ! प्रीत्या मधुरकिरणै रञ्जनीयास्त्वया ताः ॥

हे मित्र ! युवकों के हाथ को पकड़ कर स्वच्छन्दतापूर्वक वाटिका में भ्रमण करती हुई नारियाँ सरकते हुए सूक्ष्म वस्त्रों से अपने कुचाग्र को व्यञ्जित करती है । उन कदलीस्तम्भ के समान जघनवाली, दीर्घनेत्रा सकामा को तुम अपने मधुर किरणों से आनन्दित करना ।

(६२)

सम्पश्याग्रे प्रथितनगरी पेरिशाख्या विचित्रा
मन्ये न्यस्ता सुचतुरकरैर्विश्वकर्तुः सुदीर्घैः।
आयाता वा वहुगुणयुतालंकृता देशलक्ष्मीः
कन्याऽऽनीता परिणयरुचा कामदेवस्य राज्ये ॥

पेरिश नाम की विख्यात एवं विचित्र नगरी को आगे देखो। मानो विश्वकर्मा के सुदीर्घ एवं सुचतुर हाथों के द्वारा वह स्थापित की गयी है, या वहुगुणयुक्ता अलंकृता देश लक्ष्मी ही वहाँ आ विराजी है या कामदेव के राज्य में परिणय की कान्ति से कमनीया कोई कन्या लायी गयी है।

(६३)

यस्मिन्नार्यो मृदुलप्रथितैः सूक्ष्मसूक्ष्मैश्च भव्यैः
वस्त्रैश्चित्रैर्विविधगुणकैः पारदृश्यार्थसूत्रैः।
श्लिष्टाङ्ग्यो याः कमलवदनाः मांसलाः पीतमध्याः
सद्वस्त्रा वा वसनरहिता तर्कितास्ता रसज्ञैः॥

जहां की नारियां कोमल, फैले हुए अतिसूक्ष्म, भव्य, पारदर्शक, विविध सूत्रों से निर्मित एवं चित्रित वस्त्रों से श्लिष्टअंगवाली है उन कमलवदना क्षीणमध्याओं को देखकर रसज्ञलोग तर्क करते है कि ये सद्वस्त्रा हैं या वस्त्र रहिता हैं।

(६४)

तासां केशाः कुटिलितशिखा लम्बिताः शीर्षदेशात्
चन्द्रं मन्ये निगिलितुमनाः सैंहिकेयोऽस्ति लम्बः ।
भीत्याऽऽकाशाद् द्रुततरगतिश्चन्द्र आगत्य भूमौ
व्याजी सोऽयं निवसति सुखं कामिनीनां मुखाब्जे ॥

उन कामिनियों की कुटिल चोटियाँ शीर्ष प्रदेश से लम्बित है मानो चन्द्रमा को निगलने के लिए राहु लम्ब पड़ा है या भयभीत चन्द्रमा आकाश से उतर कर पृथ्वीपर आकर छल से कामिनियों के मुखाब्ज में सुख पूर्वक वास करता है ।

(६५)

श्रृङ्गारार्थं जगति सुभगाभोगरम्यं विचित्रं
प्रेमोत्कर्षे युवयुवतयो रागसंबद्ध नार्थम् !
उद्दीप्त्यर्थं निहितहृदये भावमुख्यस्य रत्याः
यत्नं सर्वं भवति युगपत् तत्कामस्य राज्ये ॥

वहाँ कामदेव के राज्य में, विश्वस्थित सुभगाओं के आभोग हेतु रम्य एवं विचित्रश्रृङ्गार के लिए, युवक तथा युवतियों के प्रेमोत्कर्ष में राग बढ़ाने के लिए एवं हृदय निहित मुख्यभाव रति को उद्दीप्त करने के लिए एक साथ ही सारे कार्य (यत्न) होते हैं ।

(६६)

दृष्ट्वा दृश्यं रतिसुखकरं दीप्तिमद्याहिशीघ्रम्
विज्ञानस्य प्रखरसुषमापूर्णशर्मण्य देशम्।
ज्ञानालोकात् जगति सकले स्वाधिपत्याभियुक्तं
वाचांदात्री परिचयवशात् तत्रमन्ये स्थिता वै॥

रतिसुकर दृश्य को देखकर दीप्तिमान विज्ञान की प्रखर सुषमा पूर्ण जर्मन देश जाओ, जो ज्ञान के आलोक से सम्पूर्ण संसार में अपना प्रमुख स्थान रखता है! मानो परिचय वश वाणी की अधिष्ठात्री देवी वहाँ आकर बैठी हों।

(६७)

तत्रस्था ये त्वभिजनकुले जन्मजाता: मनुष्याः
आशायां ते प्रकटितरुचा स्नानयुक्ताः सुवेषा:।
वेदार्थानां ग्रहणचतुरा: वेदविज्ञानदक्षा:
मन्त्रैरर्घैर्विविधविधिभिर्मानयिष्यन्ति नूनम्॥

वहाँ के उच्चकुल प्रसूत मनुष्य तुम्हारी आशा में अपने को प्रकाशित करते हुए, स्नानयुक्त, सुन्दर वस्त्रों से सुसज्जित, वेदविज्ञानदक्ष एवं वेदार्थ-ग्रहण में चतुर मन्त्रों अर्घों एवं विविध उपचारों से निश्चय ही तुम्हें सम्मान करेंगे।

६८)

स्थित्वा तस्मिन् सुखदनगरे नेत्रनिर्वाणहेतो –
दृष्ट्वा सार्द्धं निजप्रियतमै कामिनीः पाशबद्धाः ।
नेत्रक्षेपैः कमलवदनाः भ्रामयन्तीर्युवानं
अग्रे किञ्चिद् व्रज प्रियसखे ! नन्दनाख्यां प्रसिद्धाम् ॥

हे प्रिय मित्र ! उस सुखदनगरी में नयन सुख की प्राप्ति के लिए अपने प्रियतमों से आश्लिष्ट एवं दृष्टि विक्षेप से युवकों को भ्रम में डालनेवाली कमलवदना कामिनियों को देखकर उससे कुछ आगे लण्डन नामक प्रसिद्ध नगरी को जाओ।

(६९)

विख्याताया: सुभगसलीलैष्टेम्सनद्यास्तटस्था
संसारे सा प्रथितनगरी दीर्घतायां जितश्रीः ।
मुग्धानारी तरुणवयसा रूपलावण्ययुक्ता
हेमैः रत्नैरथ च वसनैर्भूषिते वानुरक्ता ॥

विख्यात सुभग सलिला टेम्सनदी के किनारे बसी हुई यह नगरी संसार में प्रख्यात है तथा दीर्घता में विजय श्री प्राप्त करने वाली है । मानो लावण्य से युक्त तरुणाई की अवस्था में मुग्धानारी स्वर्णरत्न एवं वस्त्रों से विभूषिता तथा अनुरक्ता हो ।

(७०)

तत्रस्थं तं नयनरमणं वन्दरागाहमेकं
संसारेऽस्मिन् विदितसुयशो मुख्यमुद्योगकेन्द्रम् ।
नाना भावैर्भ्रमण निरतं वाटिकायां सुयुग्मं
नूनं दृष्ट्या सुचरित फलं प्राप्स्यसि त्वं सुभोगम् ।।

वहाँ एक नयन रमण वन्दरगाह जो संसार में विदित यशवाला तथा मुख्यव्यापार केन्द्र है, एवं अनेक भावों से वाटिका में भ्रमण निरत सुयुग्मों को देखकर सुचरित फल को अवश्य प्राप्त करोगे ।

(७१)

विख्यातेऽस्मिन् परमधवले प्रोच्चप्रासादयुक्ते
स्थाने स्थाने नयनसुखदाः सज्जिताः पण्यवीथ्यः ।
तत्रानेकाः सुभगवसनाच्छन्नदेशा नियुक्ताः
क्रेतारं ता नयनरुचिभिर्वञ्चयन्त्याशु नार्यः ।।

इस विख्यात परम धवल उच्च प्रासाद युक्त नगर में स्थान-स्थान पर नयन सुखद दुकानों से गलियाँ सजी है जहाँ अनेक सुभगबसन सज्जिता नारियाँ नियुक्त है जो खरीदने वाले को नयन कांति से शीघ्र ही ठगलेती है ।

(७२)

प्रातः कालेरुचिरवपुष : कान्तिपूर्णानताङ्गी :
दृष्ट्वा शीघ्रं व्रज प्रियसखे ! स्वीङ्गनन्दं वरेण्यम् ।
विद्यांदातुं जगतिविदिता विश्वविद्यालयास्ते
यत्रानेके प्रचरणकलां शिक्षितुं सन्तियुक्ताः ॥

हे मित्र ! प्रातः काल रुचिर बदन वाली कांतिमती नताङ्गियों को देखकर वरेण्य सुन्दर इङ्गलैण्ड चलाजाना, जहाँ विद्या प्रदान करने के लिए संसार प्रसिद्ध विश्व विद्यालय हैं तथा जहाँ अनेक प्रकार के व्यावहारिक शिक्षा देने के लिए विद्वान; नियुक्त किए गये हैं ।

(७३)

गत्वा तत्र क्षणिक सुखदां वाटिकां मित्र ! पश्ये :
तन्मध्यस्थं रुचिरभवनं पश्य तद्दीर्घनेत्रै : ।
अग्रे किञ्चिद्घनसमुदये तारकावद्विभान्तीं
वाप्यास्तीरे विमल भवने द्रक्ष्यसि भ्रूविचित्राम् ॥

हे मित्र ! वहां जाकर क्षणिक सुखदेने वाली वाटिका को देखोगे जिसके बीच स्थित रुचिर भवन को तुम्हें दीर्घ नेत्रों से देखना होगा। उसके आगे वापी के किनार विमल भवन में बादलों से घिरी तारक की भाति कान्तिमती भ्रूविचित्रा को देखोगे ।

(७४

काले काले सुभगसरलामोददक्षाः सुवस्त्राः
तत्रस्थित्वा विविधविधिभिः क्रीडयन्ति प्रसन्नाः ॥
तासां मध्ये हृदयरहितां मत्प्रियां खेलशून्यां
दृष्ट्वा बन्धो ! रहसि निकटे गच्छतस्या अवश्यम् ।

हे बन्धु ! समय समय पर सरल आमोद चतुरा सुन्दर वस्त्र विभूषित प्रसन्नवदनाएँ वहां ठहर कर अनेक तरह की क्रीड़ा करती है। उनलोगों के बीच में हृदय रहित खेल शून्य मेरी प्रिया को एकान्त में देखकर उसके निकट अवश्य जाना।

(७५)

दृष्ट्वा क्षामां दिवसगणनासक्त चित्तांवियुक्ता—
मम्भः सिक्तां कमलनयनैः कञ्चुकाश्लिष्टगात्रीम् ।
उष्णैः श्वासैर्ग्लपितचिबुकां दुःखसिन्धौ निमग्नां
स्वान्तर्लग्नां सघनजघनां विद्धि तां मत् प्रपन्नाम् ॥

वह कृशाङ्गी दिवसगणनासक्तचित्तवाली वियुक्ता, नयनाम्बु से सिञ्चित होने के कारण कञ्चुकाश्लिष्ट वक्षवाली, उष्णश्वासों से खिन्न चिबुकी, दुःखसागर में निमग्ना एवं अपने अन्तःकरण में लगी हुई सघनजघना को मेरी प्रिया समझना।

(७६

ताञ्चालापैः सरससरसैश्चित्रमत्स्यावलोकै -
रुद्यानीय प्रचुरविकचोदगन्धिपुष्पावलीनाम् ।
वार्ताभिस्तैर्भवनविहगैः शिक्षितैर्ज्ञान वृद्ध -
रुद्विग्नां मद्विरहविकलां जीवनं यापयंतीम् ॥

सरस सखियों के साथ आलाप, चित्रमत्स्य एवं उद्यानीय सुगन्धयुक्त विकसित पुष्पावलोकन तथा ज्ञानवृद्धों के द्वारा पढ़ाये गये भवन विहगों के साथ वार्ताओं से उद्विग्ना, मेरे विरह में विकल-जीवन व्यतीत करती हुई को मेरी प्रिया समझना ।

(७७)

आशायां मत्समयविगते पुण्यसम्मेलनस्य
प्राच्याभायामनिमिषदृशं प्रीतिभारावनम्राम् ।
हंसैर्ज्ञाताञ्चितगतिमतीं क्षीणमध्यां शुभाङ्गीम्
पक्ष्मप्रान्तोद्वलितसलिलाऽऽसार संक्लिन्नवस्त्राम् ॥

प्रीति के भार से अवनम्रा, हंसगमना, क्षीणमध्या शुभाङ्गी, पक्ष्मप्रान्त से प्रवाहित अश्रुधारा से सक्लिन्नवस्त्रा एवं समय विगतानन्ता मेरे साथ पुण्य सम्मेलन की आशा में पूर्व दिशा की आभा में अनिमिष दृष्टि वाली को मेरी प्रिया समझना ।

(७८)

मुग्धां दग्धामिव कमलिनीं तप्तहेमाङ्ग भासां
हृष्टि पुष्टिं घटितवपुषश्चापि हित्वा कृशाङ्गीम् ।
ग्रीवाबद्धैर्मणिविरचितैः स्वर्णहारैः समिद्धौ
यद् वक्षोजौ कनककमलौ कम्पितौ मारघातैः ॥

मुग्धा, दग्धकमलिनी तुल्या तप्तहेमाभ प्रभायुक्ता, हृष्टता, पुष्टता एवं सुगठित शरीर को त्यागकर कृशअङ्गवाली, मणिविरचितहार से सुशोभित ग्रीवावाली एवं काम के आघात से कम्पित कनक कमल तुल्य वक्षोजवाली को मेरी प्रिया समझना ।

(७९)

तत्रोद्याने प्रथिततरुभिः पंक्तिवद्धैः सुरम्यैः
फुल्लैः पुष्पैरथ सुरभितैः सूच्यते शुभ्रशोभा ।
तस्मिन् मित्र ! भ्रमणनिरतां मानसाह्लाद हेतोः
पत्रैर्लोलैः पवनपतितैः प्रेरितस्वान्तवृत्तिम् ॥

उस उद्यान में विख्यात सुरम्य, एवं पंक्तिवद्ध वृक्षों से तथा सुगन्धित एवं विकसित पुष्पों से शुभ्र शोभा सूचित होती है । हे मित्र ! उस उद्यान में मनोविनोदार्थ भ्रमणनिरता, हवा के चलने से चञ्चल पत्ते की भाँति प्रेरित अन्तवृ त्तिवाली को मेरी प्रिया समझना ।

(८०)

आदिष्टा ये ह्यनुचरगणा वाहुनिर्माणहेतोः •
संयोगार्थं विविधविधिभिर्ब्रह्म पुत्रानताङ्ग्याः।
आकाराणां ग्रहणचतुराः पद्मनालस्यसूत्रं
दृष्ट्वा शीघ्रं नहि-नहि इति व्यहारन्तो गतास्ते ॥

उसनताङ्गी के वाहुनिर्माण के लिए जिन ब्रह्मपुत्र अनुचरगणों ने आदेश प्राप्त किया था, आकारों के ग्रहण में चतुर वे सभी पद्नाल के सूत्र को देखकर नहीं नहीं इस प्रकार कहते हुए चले गये।

(८१)

तस्मिन् गत्वा जलधिनिकटे मज्जितुं चेष्टितास्ते
नैवायाताकिमुतसलिलें ध्यानमग्ना अभूवन्।
प्राप्तुं तस्मिन् तपसि निरता मार्दवं रूप 'पुण्यम्
किं भो ! सत्यं कर कुवलयं प्राप्यते नालसूत्रैः॥

(पद्मनाल) सबों ने समुद्र के निकट जाकर डुबने की चेष्टा की। वे लोग लौटे नहीं अपितु जल में ही उसके मृदुतारूप पुण्य की प्राप्ति के लिए तपस्या निरत ध्यान मग्न हो गये। क्या सचमुच नालसूत्रों के द्वारा कर कुवलय की प्राप्ति हो सकती है।

(८२)

याताः सर्वे तदनुतरसा मार्दवं कान्तिसारं
नीत्वा हृप्टा भुवनसरसः कुड्मलेभ्यः समग्रम्।
क्ष्मायागर्तस्थित कनकतश्चाप्य वाहू विधाय
तस्यामन्ये गहनविषये लब्धवन्तः पटुत्वम्

(ब्रह्म पुत्र) उन लोगों ने सवेग प्रस्थान किया तथा संसार के सरोवरों के कमल कलियों से समग्र मृदुता एवं पृथ्वी के खान स्थित स्वर्णसे कान्ति-सार को लेकर उसके वाहुओं को वनाकर ही मानों इस गहन विषय में पटुत्व को प्राप्त किया।

(८३)

योऽसौचन्द्रो नहि तुलयितुं संक्षमोनैज कान्त्या
कृष्णे पक्षे ह्सितकिरणः क्षीणकान्तिस्त्वमायाम्।
शुक्ले पक्षे त्वरितगमनः पूर्णिमायां सुभव्यः
आस्येयस्य भ्रमति शशकः कृष्णलक्ष्माति निन्द्यः॥

चन्द्रमा अपनी कांति से उसका तुलना करने में समर्थ नहीं है क्योंकि वह कृष्ण पक्ष में क्रमिक घटते किरणों वाला है और इस प्रकार अमावस्या को वह कान्ति हीन हो जाता है शुक्ल पक्ष में त्वरितगति धारण कर पूर्णिमा को सुभव्य हो जाता है लेकिन इसके वदन में शशक भ्रमण करता है तथा यह कृष्ण लक्ष्म से युक्त एवं अतिनिन्द्य है।

(८४)

यद्वक्षस्थे कमलमुकुले भ्रान्तिमन्तौ द्विरेफौ
स्वादं स्वादं परिमलवशौ तत्रमन्ये स्थितौ वै।
तस्मादेते ननुपृथुलिते पूर्णकुम्भोपमेये
धत्तो मध्ये विसितलसितं मञ्जुलक्ष्मातिरम्यम् ॥

वक्षस्थित कमल मुकुलों पर भ्रान्तिमान परिमल वशवर्ती दो द्विरेफ मानो स्वादग्रहण करता स्थित है इसी लिए निश्चय ही वे दोनों पृथुल पूर्ण कुम्भ की भाँति हो गये हैं तथा अतिरम्य विसित मञ्जुल लक्ष्म (कृष्ण) को मध्य में धारण करते हैं।

(८५)

सत्यं तस्यास्त्रिवलि सुभगा क्षामभूताऽपिरम्या
गम्भीरा सा गहनगहना गर्तभूताऽथ मध्या।
नाभीत्येवं वचन विदिता सूचयन्ती भयं या
दृष्टाविज्ञैः रसिकयुवकैरर्चिताऽभ्यर्थिता च ॥

वस्तुतः उसकी सुभगा त्रिवली क्षाम (कृश) होने पर भी रम्य है जिसके मध्य में गम्भीर गहन गर्तयुक्त नाभी स्थित है, जो डरो मत (नाभी) ऐसा कहती हुई भय का प्रदर्शन करती है वह मुझ विज्ञरसिक युवक के द्वारा देखी गयी तथा सम्मानित एवं प्रार्थित हुई।

(८६)

तस्यादेव्याजघनरचनायां करादिग्गजाना—
मायातास्तत् कलनकुशलैः कर्कशत्वान्निरस्ताः ।
रम्भास्तम्भाअपिच विदिता मांसलाः शीतलत्वा—
त्यक्तास्तूर्णं पुनरपिविधिश्चिन्तयामास योग्यान् ॥

उस प्रकाश युक्त के जघन रचना में दिग्गजों के करसमूह आये लेकिन कुशल नर शिल्पियों ने उसे कर्कश होने के कारण निकाल दिया। मसृण कदली स्तम्भ भी शीतल होने के कारण छोड़ दिये गये तव, ब्रह्मा ने पुनः उसके लिए योग्य वस्तुओं के सम्बन्ध में विचार किया।

(८७)

शीतोष्णानां समयसदृशं संग्रहं भिन्नदेशात्
कृत्वा ब्रह्मा चतुर करणैः स्निधतायै च तस्याः ।
सौभाग्येन प्रथितजघनं स्वेच्छया दिव्यदेशे
यस्मिन् देवाः ददति 'रचयासास' उदगीर्ण दृष्टिम् ॥

ब्रह्मा ने स्वेच्छया अपने दक्ष हाथों से स्निग्धता के लिए उसके प्रथित जघन को विभिन्न स्थानों से समयानुसार शीतोष्णों को संग्रह कर सौभाग्य वश दिव्यलोक में ही बनाया जहाँ पर देवता लोग अपनी उद्गीर्ण दृष्टि (उगलती आँखें) डाले रहते हैं।

(८८)

यस्याः पादाङ्गुलिनखमुखज्योत्स्नयाहर्निशंत—
द्देशो भाति प्रमथितमनो ध्वान्तमैत् कन्दरायाम् ।
मन्ये राहुग्रसनभयतश्चन्द्रमानाकचारी
आगत्यास्या वसति नखगो धर्मसाम्याद्विलीनः ॥

जिसके पैर के अंगुलियों के नख मुख की कांति से वह स्थान प्रकाशित होता है मानो दुःखी मनवाला अन्धकार कन्दरा में चला गया है तथा मानो आकाश चारी चन्द्रमा राहु के ग्रसन भय से भाग कर इसके नखों में जाकर धर्म साम्य के कारण विलीन हो गया है ।

(८९)

शुभ्रा भव्या हरिणनयना पुष्पलिट् पंक्तिकेशा
क्षीणा मध्ये पृथुलजघना मांसला सन्नितम्बे।
कम्बुग्रीवा सुरभितमुखी दिव्यनिश्वासगन्धैः
धात्राऽऽनीयाम्बुजसुमपुटे लाक्षया मुद्रितेव ॥

शुभ्रा, भव्या, हरिणनयना, भ्रमरपंक्ति की भाँति केशवाली, क्षीणमध्या, पृथुलजघना, मांसल नितम्बा, कम्बुग्रीवा, दिव्य निश्वास गन्ध से सुगन्धित मुखवाली ब्रह्मा द्वारा लाकर कमलपुट पर लाक्षा से मुद्रित की भाँति वह है ।

(९०)

सा तन्वङ्गी चिरपरिचिता रूपलावण्ययुक्ता
रात्रौ स्वप्ने चिरविरहिता संस्मरन्त्यागता ताम् ।
ऐच्छं धर्तुं परिचयवशाद् रत्नवद् सागरस्य
हस्तस्पर्शैः सपदिरहिताः हा गता सा गताशा ।।

वह चिरपरिचिता रूपलावण्य युक्ता, चिर विरहिता, तन्वंगी स्मरण करती रात्रि में आयी । उसे परिचयवश सागर के रत्न की भाँति पकड़ने की इच्छा की लेकिन हा ! हस्तस्पर्श के बिना ही वह चली गयी ।

(९१)

त्वां दृष्ट्वाऽपि प्रबलविरहादात्मचैतन्यशून्या
चिन्ता वह्नौ ज्वलितहृदया कामभावेन्धनेन ।
सत्कारादिं हृदयरहिता प्राच्यदेशानुकूलम्
नूनं तत्रस्मरमदयुता विस्मरिष्यत्यदोषा ।।

प्रबल विरह के कारण आत्मचैतन्य शून्या, काम भावरूपी इन्धन से चिन्तारूपी वह्नि में ज्वलित हृदया, रहृदयरहिता, स्मरमदयुक्ता, अदोषा तुम्हें देखकर प्राच्यदेशानुकूल सत्कार करना भी निश्चय ही भूल जायगी !

[९२]

स्थित्वा तस्याः सुभगनिकटे वाष्पपूर्णाकुलायाः
अन्तर्दृष्ट्यै शिथिलवसनायै पृथिव्यां लिखन्त्यै ।
किञ्चित्तस्यै प्रखरकिरणैः दीयतां शुभ्रकान्तिः
दृष्ट्वानारी प्रियजनरुचंमुञ्चति स्वानुतापम् ॥

उस वाष्पपूर्णाकुला के निकट ठहर कर अन्तर्दृष्टियुक्ता शिथिल वसना पृथ्वी पर लिखने वाली के लिए तुम अपने प्रखर किरणों से शुभ्रकांति देना क्योंकि नारी अपने प्रियजन की कांति को देखकर अपने ताप से राहत पाती है।

[९३]

तस्मिन्काले मधुरनयनैर्वीक्ष्यसे प्रेमभावैः
तस्यादेव्याः प्रियहितवचः श्रोतुमुत्कण्ठितायाः ।
प्रेमिप्रान्तादधिगतहरं कामिनी कामभावा
दृष्ट्वानूनं हृदयनिहितं पृच्छति स्वात्मभावम् ॥

उस समय प्रियहित वाणी को सुनने के लिए उत्कण्ठित उस मेरी प्रिया के प्रेम भावयुक्त मधुर नयनों से तुम देखे जाओगे। क्योंकि प्रेमि देश से प्राप्त सन्देश हर को देखकर कामभावा कामिनी अपने हृदयस्थित कामभाव को पूछती है।

[९४]

भावं तस्याः प्रवलहृदये तादृशं प्रेमयुक्तम्
पूर्वं ज्ञात्वा चिरविरहजं स्वागतेनाति शून्यम्।
चिन्ता कार्यं नहि मम सखे ! विस्मरन्तिस्मरार्ताः
स्त्रीणा सत्यं विरह जनितो राग औचित्य हीनः ।।

हे प्रिय मित्र ! चिरविरहज उसके हृदयस्थित स्वागतशून्य प्रवल प्रेम भाव को पहले जानकर चिन्ता मत करना क्योंकि कामार्ता भूलजाती हैं। सच है स्त्रियों का राग औचित्य हीन होता है।

[९५]

तस्याः पार्श्वे यदि ममसखे ! भारतादागतोऽहम्'
इत्याख्यानं कथयसि तदा प्रेमशब्दार्थ कामा।
मूढ़ा तप्ता सजलनयना दृष्टिभिर्निर्निमेषैः
द्रष्टुं तत्रस्थगित चरणायास्यति ब्रह्मलग्ना ।:

हे मेरे मित्र ! उसके सन्निकट 'मैं भारत से आया हूँ" ऐसा कहोगे तो वह प्रेम शब्दार्थाभिलाषिणी, मूढ़ा कामतप्ता, साश्रुनेत्रा निर्निमेष दृष्टियों से तुम्हें देखने के लिए ब्रह्मलग्ना की भांति खड़ी रहेगी।

[९६]

आसीनायां भुविविरचितायां सखे ! मत्प्रियायाम्
प्राग्भागैस्तत्कमलबदनं पश्चिमाशामुखस्त्वम् ।
पश्यन् काले कथय सुवचो मन्मनस्थं प्रियायाः
सन्देशार्थं नियतपुरुषैरिष्यते स्वाभिमुख्यम् ॥

हे सखे ! पृथ्वी पर विरचित आसन पर मेरी प्रिया के आसीन होने के बाद पश्चिम दिशा में मुखवाला तुम पूर्व दिशा में उसके कमल वदन को देख कर मेरे मनस्थित प्रिया के सुन्दर बचन को यथा समय कहना, क्योंकि सन्देश के लिए विहित पुरुष स्वाभिमुख्य चाहता है।

[९७]

पत्युर्दूतं विरहविकले ! विद्धिमूर्तं मयूखं
संदेष्टुं मां तवसुनिकटेऽभ्यागतं मित्रकार्यात् ।
सन्तप्तानां मदनतपनैर्हारकं प्रज्ज्वरस्य
कामासक्ते ! व्यथितहृदयानां व्यथा रोगवैद्यम् ॥

हे विरह विकले ! मित्र के कार्य से तुम्हारे निकट सन्देश कथन के लिए आया हुआ मुझे अपने पति का दूत मूर्तमयूख समझो। हे कामासक्ते ! मदन पीड़ा से सन्तप्तों के ज्वर को हरण करने वाला तथा व्यथित हृदयों के व्यथा नामक रोग का मुझे वैद्य समझो।

[९८]

तत्रस्थोऽसौ प्रियसहचरः पृच्छति प्राणयुक्तः
आयुष्कामः कुशलमखिलं त्वां कृशःप्राप्तचिन्तः।
सत्यंखिन्नस्तव विरहजैरश्रुभिः क्लिन्नदेह :
आशायां ते मदनवशगो जीवमात्रोऽप्यजीवः ॥

वहाँ स्थित तुम्हारी दीर्घायु कामना वाला कृश, चिन्तासक्त प्राणयुक्त प्रिय सहचर ने तुम्हारी सारी कुशलता पूछी है। वस्तुतः तुम्हारे चिर विरह से उत्पन्न अश्रु से क्लिन्न देहवाला खिन्न वह मदन वश वर्ती तुम्हारी आशा में जीवित होने पर भी निर्जीव है।

[९९]

त्वत्सम्पर्कग्रहणनिरतो भारतीयाग्रगण्यो
नित्यं प्राप्तुं विविधविधिभिः पारपत्रानुदेशम्।
पत्राचारैर्बहुलविभवैराशयाचेष्टितोऽसौ
आशायांहिप्रबल पुरुषै : जीव्यते स्वात्मरक्षै ॥

तुम्हारे सम्पर्क का इच्छुक उस भारतीयाग्रगण्य ने आशान्वित होकर पत्राचार, धन व्ययादि विभिन्न विधियों से पार पत्र प्राप्ति की चेष्टा की है। क्योंकि आशा में ही प्रबल पुरुष स्वात्मरक्षा के साथ जीता है।

(१००)

अत्र स्थित्वा बहुविधसुखं प्राप्य तारुण्य रूपं
प्रत्यङ्गानां सुखदविषयः स्वेच्छया तेन भुक्तः ।
दूरस्थोऽसौ स्वरचितपदं व्यग्रतायाः स्वरूपम्
औत्कण्ठ्येनोद्व्यथित हृदयो मन्मुखेनेदमाह ॥

यहाँ ठहरकर तारुण्य के अनुरूप अनेक प्रकार के सुख को प्राप्त कर प्रत्येक अंगों के सुखद विषयों का स्वेच्छा पूर्वक उसने उपभोग किया ! दूरस्थ उत्कण्ठा से व्यथित हृदयवाला इसने व्यग्रता स्वरूप स्वरचि पद को मेरे मुख के माध्यम से यह कहा।

[१०१]

हासो वासो नयन चलनं दीप्तियुक्तं मुखाब्जं
वाणीः सत्यं विविध विषयो यन्मया तत्रप्राप्तः ।
फुल्ले पुष्पे वटतरूवरे नेत्रभागे मृगस्य
नाप्तश्चन्द्रे किमपि वचने चात्रपुंस्कोकिलानाम् ॥

निश्चय ही हास, वास नेत्र की चञ्चलता, दीप्तिमान मुखाब्ज, वाणी आदि विविध विषय जो मुझे वहां प्राप्त हुए वे सब यहाँ फुल्ल पुष्पों में हँसी, वट तरुवर में वस्त्र, मृग के नेत्र भाग मे चञ्चलता चन्द्रमा में दीप्ति तथा पुंस्कोकिल की वाणी में वह वाणी नहीं मिलती।

(१०२)

वामे ! कामात् स्वयमयि ! सुखादागतासी रजन्यां
गोढ़ोद्धद्धा सुखदवसनैः कञ्चुकाभ्यन्तरीयैः ।
संस्पर्शं मे नहि नहि नहि व्याहरन्ती व्युदस्य
दूरादेव प्रणयजनितं भावमाशंसतिस्म ॥

अयि वामे ! रात्रि में कामवशात् कञ्चुकान्तर सुखदवसन से दृढ़ बँधी हुई स्वयँ सुखपूर्वक आयी थी लेकिन नहीं, नहीं, नहीं ऐसा कहती हुई मेरे संस्पर्श के बिना ही दूर से अपने प्रणय जनित भाव को प्रकट कर दी थी।

[१०३]

तस्यां रात्रौ प्रणयसरला कामिनी स्वेदयुक्ता
शय्यायां त्वं कुसुमितवपुश्चेष्टिताऽऽलिङ्गितुं हा ।
हस्तौ क्षिप्तौ मम विफलितेऽहं ततः साश्रुनेत्रो
भाग्यं क्रोशन् वचन रहितोऽद्यापिवर्ते कथञ्चित् ॥

उस रात्रि में प्रणय सरला, स्वेदयुक्ता कुसुमित शरीरा, कामयुक्ता तुम शय्या पर आलिङ्गन के लिए चेष्टा की गयी, लेकिन मेरे हाथ फेंक दिये जाने पर विफल हो गये इसके बाद मैं अश्रुपूर्ण नेत्रों वाला अपने भाग्य को कोसता हुआ वचन रहित आज भी किसी तरह हूँ।

[१०४]

अम्भोजस्य प्रथितफलके लेखनीं पद्मनालैः
रङ्गं रागैर्निखिलसुभगैर्भावमाङ्गल्यपूर्णैः ।
नीत्वा ज्ञातः तवशशिकलालेखनात् पूर्वमेव
प्रेमारागैर्हृदयपटले चाङ्कितं प्रेमचित्रम् ॥

कमल के विहित फलक परपद्मनाल की लखनी को एवं सभी सुभग-भाव माङ्गल्यपूर्ण रंग राग को लेकर तुम्हारे शशिकला को लिखने के पूर्व ही मैंने जाना कि प्रेम राग से हृदय पटल पर तो प्रेमचित्र अंकित हो है।

[१०५]

मासंयावत् गमय समयं क्लेश कारुण्यपूर्णं
प्रस्थानस्य प्रमुदित तिथिः प्राप्स्यते स्वात्मयोगात् ।
दुःखस्यान्तो भवति सुमुखि ! प्रेमराज्ये सुखार्थं
चन्द्रस्तीर्त्वा विरह दिवसं सौख्यपूर्णो निशायाम् ॥

एक महीने तक क्लेश कारुण्य पूर्ण समय को विताओ ! प्रस्थान की प्रमुदित तिथि स्वात्मयोग से प्राप्त होगी, क्योंकि हे सुमुखि ! प्रेमराज्य में दुःख का अन्त सुख के लिए होता है। चन्द्र विरहरूपी दिवस को बिताकर रात्रि में सुखपूर्वक रहता है।

[१०६]

उच्छ्वासेभ्यस्तवविरहजाः पश्चिमादागता ये
तप्ताः शुष्कास्त्वरित गमना वाष्पलिप्ताश्च वाताः।
आश्लिष्यंते मदनतपने ! व्याकुलेनार्त भावात्
त्वत्सम्पर्कात् यदि किलमया प्राप्स्यते स्पर्शभावः॥

हे मदनतपने ! तुम्हारे उच्छ्वासों से विरह-जन्य शुष्क, वाष्पलिप्त एवं त्वरित गमन वायु, , जो पश्चिम दिशा से आते हैं निश्चय ही तुम्हारे सम्पर्क से मुझे स्पर्श भाव की प्राप्ति होगी, इसलिए आलिङ्गन किए जाते हैं।

[१०७]

आशायां मे सकल दिवसो यास्यति त्वत्प्रप्राप्तेः
एवं रीत्या त्वमपि विमले ! मागमः खिन्नभावम्।
तापं तीर्त्वा बिरहजनितं प्राप्यते कैर्नशान्तिः
नक्तंयाते भवति मिलनं चक्रवाकस्य नूनम्॥

विमले ! तुम्हारी प्राप्ति की आशा में मेरे सारे दिन वीत जायेंगे, इसी प्रकार तुम भी खिन्न दशा को मत प्राप्त करना। विरहजनित ताप को पाकर कौन (व्यक्ति) शान्ति नहीं प्राप्त करता। क्योंकि रात्रि के बीत जाने पर चक्रवाक का मिलन निश्चय ही होता है।

[१०८]

शेषान् क्लेशान् गमय सरले ! कौतुका्हलाद हेतो :
मासान्तेऽस्मिन् विरह जनितं चोत्थितान्योन्य भावम् ।
आवांतस्मिन् सुभगरचिते क्रीडनोद्यानमध्ये
संद्रक्ष्यावो रहसि युगपत् दिव्यजन्तोः समक्षे ।

हे सरले ! कौतुकाह्लाद के लिए शेष क्लेश को विताओ । इस महीने के अन्त में हमलोग विरह जनित उत्थित अन्योन्य भाव को उस सुगम रचित एवं प्रकाशित क्रीडनोद्यान मध्य में दिव्य जन्तुओं के बीच देखेंगे ।

(१०९)

भर्तुश्चान्तं विकलवचनं निःसृतंयन्मुखाब्जाद्
व्याप्तं सर्वं निखिलगगने प्राप्स्यते तत् त्वयैव ।
योगैर्नादः प्रचरति यथा स प्रकाशेन युक्तः
नित्यः सत्यस्तवगुणवति ! प्राणनाथस्यनूनम् ।।

हे गुणवति ! तुम्हारे प्राणनाथ के विकल नित्य वचन जो मुख से निकले हैं वे सभी आकाश में व्याप्त हो गये हैं वे सब तुझे अवश्य प्राप्त होंगे । जिस प्रकार प्रकाश से युक्त योग के द्वारा नाद प्रचरित होता ।

(११०)

स्वप्ने दृष्टं तव शुभवपुस्तादृशं युक्तरूपं
चान्ते रात्रौ मुदितवदने ! संगमः प्राप्स्यते नौ ।
सत्सन्देशं विरचितपदं यन्मुखादुद्गतं मे
उक्त्वा ज्ञात्वा मनसि विरहं मत्सखे ! बोधयत्वम् ॥

हे मुदित वदने ! रात्रि के अन्त में उपयुक्त कान्ति के साथ तुम्हारे शुभ शरीर को स्वप्न में देखा है । अतः हमलोगों का मिलन अवश्य होगा । हे मेरे मित्र ! विरचितपद में सत्सन्देश जो मेरे मुख से निकले हैं इसे कहकर तथा उसके मन के विरह को जान कर मुझे बतलाना ।

(१११)

दौत्यं लोके भवति बहुशः प्रेमसंचालनाय
काव्यात्नूनं निखिलजगतः भावनायां विकासः ।
आनन्दो वा रसिक हृदये प्राप्यते प्रेममार्गात्
सोद्देश्योऽयंभवतु रचितः दूतकाव्ये मयूखः ॥

प्रायः संसार में दौत्य कर्म प्रेम संचालन के लिए होता है । निश्चय ही काव्य से सम्पूर्ण जगत् की भावना का विकास होता है । या रसिक हृदयों में प्रेममार्ग से आनन्द की प्राप्ति होती है । अतः दूत काव्यों में रचित यह मयूख दूत इन्हीं उद्देश्यों से युक्त हो ।